



उच्च न्यायालय इलाहाबाद
लखनऊ

आपराधिक अपील संख्या - 2447 / 2004

जरनैल सिंह

..... अपीलकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

..... प्रतिवादी

अपीलकर्ता के अधिवक्ता

: हरिओम सिंह, राम राज ओझा

प्रतिवादी के अधिवक्ता

: शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या - 28

माननीय न्यायमूर्ति प्रमोद कुमार श्रीवास्तव

1. वादों की सूची दोहराई गई तथा वाद को दूसरी पुकार में सुना जा रहा है।
2. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।
3. यह वर्तमान अपील, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अंतर्गत, अपर सत्र न्यायाधीश, न्यायालय कक्ष संख्या 5, लखीमपुर खीरी के दिनांक 20.10.2004 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध की गई है। यह निर्णय, सत्र विचारण संख्या 49/1995 (जो अपराध सं.

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

90/1992 से सम्बंधित है) में दिया गया था, जो कि थाना-संपूर्णनगर, जिला-खीरी के अंतर्गत है। इसमें अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अंतर्गत दोषी ठहराया गया था और उसे 6 महीने की कठोर कारावास की सज़ा सुनाई गई थी और 1,000 रुपये का जुर्माना (तथा जुर्माना न देने पर एक महीने की अतिरिक्त कारावास की सज़ा काटनी होगी) और भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अंतर्गत 2 वर्ष की कठोर कारावास की सज़ा सुनाई गई थी तथा 3,000 रुपये का जुर्माना (और जुर्माना न देने पर तीन महीने की अतिरिक्त कारावास की सज़ा काटनी होगी) की सज़ा सुनाई गई थी। सभी सज़ाएँ एक साथ चलाने का आदेश दिया गया था।

4. अभियोजन पक्ष के अनुसार, मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि, दिनांक 10.10.1992 को लगभग 23:30 बजे, शिकायतकर्ता परमानंद अपने खेत की देखभाल करके अपने घर लौट रहा था। जब वह जरनैल सिंह के घर के सामने से गुज़र रहा था, तो अपीलकर्ता-अभियुक्त जरनैल सिंह ने, जोगेन्द्र सिंह और अब्दुल हमीद के साथ, जो घात लगाए बैठे थे, उस पर हमला कर दिया। कहा जाता है कि अभियुक्त जरनैल सिंह कथित तौर पर बांका (एक धारदार हथियार) से लैस था, जबकि बाकी लोगों ने लाठियों का प्रयोग किया। हमले के कारण, शिकायतकर्ता के सिर और शरीर पर कई चोटें आईं, जैसा कि चिकित्सीय आख्या (प्रदर्श क-2 एवं क-3) में विस्तार से बताया गया है। मोल्हे, नारायण एवं अन्य साक्षी मौके पर पहुंचे तथा शिकायतकर्ता को बचाया, जिसके बाद अभियुक्त गण धमकी देते हुए भाग गए। घटना की जानकारी थाना-संपूर्णनगर, जिला-खीरी को दी गई और उसके आधार पर जरनैल सिंह एवं अन्य के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 324, 504 एवं 506 के अंतर्गत प्राथमिकी दर्ज की गई।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

5. अन्वेषण के दौरान अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल का दौरा किया तथा नक्शा-नज़री (प्रदर्श क-6) तैयार किया। उन्होंने साक्षियों के बयान दर्ज किए तथा अन्वेषण पूरा करने के बाद, जरनैल सिंह एवं अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 324, 504, और 506 के अंतर्गत आरोप पत्र को पेश किया।
6. विचारण के दौरान, कुछ अभियुक्तों को या तो उन्मोचित कर दिया गया या उनकी मृत्यु हो गई और अभियुक्त/अपीलकर्ता जरनैल सिंह के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 324, 504 एवं 506 के अंतर्गत आरोप तय किए गए। अभियुक्त/अपीलकर्ता ने अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों से इनकार किया तथा विचारण (ट्रायल) की मांग की।
7. अपना मामला सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा कई साक्षियों का परीक्षण किया गया, जिनमें अभियोजन साक्षी-1 परमानंद (शिकायतकर्ता), अभियोजन साक्षी-2 मोल्हे (घायल साक्षी) और अभियोजन साक्षी-3 डॉ. रवींद्र कुमार शामिल थे। अभियोजन द्वारा पेश किए गए प्रलेखी साक्ष्यों में तहरीर (प्रदर्श क-1), प्राथमिकी (प्रदर्श क-4), घायलों की चिकित्सीय आख्या (प्रदर्श क-2 एवं क-3) तथा आरोप पत्र (प्रदर्श क-6) शामिल थे।
8. अभियोजन पक्ष के साक्ष्य समाप्ति के पश्चात, विचारण न्यायालय ने अभियुक्त/अपीलकर्ता के बयान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज किए। उसे सारे दोषी ठहराए जाने वाले साक्ष्यों के बारे में समझाया गया, जिसमें अभियुक्त-अपीलकर्ता ने अभियोजन पक्ष की कहानी से इनकार किया और कहा कि उसे दुश्मनी की वजह से झूठा फंसाया गया है तथा कहा कि घटना उस तरह से नहीं हुई थी, जैसा बताया गया है।
9. इसके बाद, दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं को सुनने तथा मौखिक साक्ष्य एवं प्रलेखी साक्ष्य को देखने के बाद, विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियुक्त/अपीलकर्ता जरनैल सिंह को दोषी पाया। उसे दोषी ठहराया गया और भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अंतर्गत 6

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

महीने की कठोर कारावास की सजा सुनाई तथा ₹1,000 का जुर्माना (और न देने पर 1 महीने की अतिरिक्त कारावास की सजा सुनाई) और भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अंतर्गत 2 साल की कठोर कारावास की सजा सुनाई और ₹3,000 का जुर्माना (और न देने पर 3 महीने की अतिरिक्त कारावास) की सजा सुनाई गई।

10. आक्षेपित निर्णय एवं दोषसिद्धि के आदेश से व्यथित एवं असंतुष्ट होकर, अभियुक्त-अपीलकर्ता ने इस न्यायालय में यह अपील की है।
11. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि हालांकि उन्होंने दोषसिद्धि के निर्णय और दंड के आदेश के विरुद्ध अपील की है, लेकिन इस स्तर पर, वह सिर्फ दंड के संबंध में अपील करना चाहते हैं तथा गुण के आधार पर अपील नहीं करना चाहते हैं।
12. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि उत्तर प्रदेश राज्य की स्वयं की स्थानीय परिवीक्षा विधि है, यानी उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938 । उन्होंने आगे कहा कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (केंद्रीय अधिनियम) (जिसे आगे 1958 का अधिनियम कहा जाएगा) उत्तर प्रदेश राज्य में भी लागू होता है, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मोहम्मद हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2017) 2 एससीसी 198 के मामले में कहा था। इस तरह, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि किसी भी अधिनियम में लाभ देना, न्यायालय का विवेकाधिकार है।
13. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि घटना लगभग 33 वर्ष पहले (अक्टूबर 1992) हुई थी और अपीलकर्ता जरनैल सिंह के विरुद्ध कोई और आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है। इस अपील के अंतिम निस्तारण में लंबी देरी हुई है, जो कि 2004 से लम्बित है, इससे अपीलकर्ता अपने शीघ्र विचारण के अधिकार से वंचित हुआ है। यह भी कहा गया है कि अपीलकर्ता ने पहली बार अपराध किया है और उसे पहले कोई सजा नहीं हुई है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

यह देखते हुए कि उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और 324 के अंतर्गत दोषी ठहराया गया था और अधिकतम दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई थी, उसे पहली बार अपराध करने वाले का लाभ दिया जा सकता है। अपीलकर्ता, न्यायालय से यह प्रार्थना करता है कि उसे अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4 का लाभ दिया जाये, जिससे उसे हिरासत की सज़ा काटने के बदले सदाचार की परिवीक्षा पर छोड़ा जा सके।

14. दूसरी तरफ, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने अपील का विरोध किया और दलील दी कि विचारण न्यायालय द्वारा कोई भी भौतिक अनियमितता या अवैधता नहीं की गई है तथा अभिलेख (रिकॉर्ड) में मौजूद साक्ष्यों को देखते हुए, अभियुक्त-अपीलकर्ता को सही दोषी ठहराया गया है।
15. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने आगे दलील दी कि 1958 के अधिनियम की धारा 4 का लाभ अभियुक्त-अपीलकर्ता को कुछ शर्तों पर दिया जा सकता है, जैसा कि 1958 के अधिनियम की धारा 4 में बताया गया है।
16. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की दलील पर विचार करने से पहले, अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 3 और 4 को उद्धृत करना ज़रूरी है :

3. कतिपय अपराधियों को भर्त्सना के बाद छोड़ देने की न्यायालय की शक्ति -

"जहां कोई व्यक्ति भारतीय दंड संहिता (45 of 1860) की धारा 379 या धारा 380 या धारा 381 या धारा 404 या धारा 420 के अधीन दण्डनीय कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है या भारतीय दंड संहिता या किसी अन्य विधि के अधीन दो वर्ष से अनधिक अवधि के लिए कारावास या जुर्माने अथवा दोनों से दण्डनीय कोई अपराध करता है और उसके विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि, सिद्ध

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

नहीं होती है तथा जिस न्यायालय ने उस व्यक्ति को दोषी पाया है, उसकी राय है कि मामले की परिस्थितियों को, जिसमें अपराध की प्रकृति तथा अपराधी का चरित्र भी शामिल है, ध्यान में रखते हुए ऐसा करना सही है, तो उस समय लागू किसी अन्य विधि में किसी भी बात के बावजूद, न्यायालय उसे धारा 4 के तहत कोई दण्ड देने या सदाचरण की परीक्षा पर छोड़ देने के बजाय, उसे सम्यक भर्त्सना के पश्चात छोड़ सकेगा।

स्पष्टीकरण - इस धारा के उद्देश्य के लिए किसी व्यक्ति के विरुद्ध पूर्व दोषसिद्धि में, इस धारा या धारा 4 के अधीन उसके विरुद्ध दिया गया कोई भी पूर्व आदेश शामिल होगा।

4. कतिपय अपराधियों को सदाचरण की परीक्षा पर छोड़ने की न्यायालय की शक्ति - (1) जब कोई व्यक्ति ऐसा कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है, जो मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय नहीं है और जिस न्यायालय ने उस व्यक्ति को दोषी पाया है, उसकी राय है कि मामले की परिस्थितियों को, जिसमें अपराध की प्रकृति तथा अपराधी का चरित्र भी शामिल है, ध्यान में रखते हुए ऐसा करना सही है, तो उस समय लागू किसी भी अन्य विधि में किसी भी बात के बावजूद, न्यायालय उसे तुरंत दंडित करने के बजाय, यह निर्देश दे सकता है कि उसे प्रतिभुओं सहित या उनके बिना, ऐसा बंधपत्र देने पर छोड़ दिया जाये कि वह तीन वर्ष से अनधिक की ऐसी कालावधि के दौरान, जैसा की न्यायालय निर्दिष्ट करे, आहूत किये जाने पर उपस्थित होगा और दण्डादेश प्राप्त करेगा तथा इस बीच परिशान्ति कायम रखेगा और सदाचारी रहेगा :

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

परन्तु न्यायालय किसी अपराधी को ऐसे छोड़ दिए जाने का निर्देश तब तक नहीं देगा, जब तक उसे यह यकीन न हो जाए कि अपराधी या उसके प्रतिभू, यदि कोई हो, का उस स्थान पर कोई नियत निवास स्थान या उस स्थान में कोई नियमित उपजीविका है, जिस पर वह न्यायालय अधिकारिता का प्रयोग करता है या जिसमें अपराधी के उस कालावधि के दौरान रहने की संभाव्यता है जिसके लिए वह बंधपत्र देता है।”

17. 1958 के अधिनियम की धारा 4 तब लागू होती है, जब कोई व्यक्ति ऐसे अपराध करने का दोषी पाया जाता है जिसका दण्ड न तो आजीवन कारावास है और न ही मृत्यु है। न्यायालय ऐसे अभियुक्त को धारा में बताए गए बंधपत्र पर सदाचार की परिवीक्षा पर छोड़ सकता है। इस धारा के प्रावधानों को लागू करते समय न्यायालय का अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने से पूर्व मामले की परिस्थितियों, अपराधी के चरित्र तथा अपराध की प्रकृति पर भी विचार करना आवश्यक है।

18. जहां तक अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की 1958 के अधिनियम के धारा 4 का लाभ देने की प्रार्थना का प्रश्न है, तो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बताए गए विधिक स्थिति तथा विधि पर चर्चा करना ज़रूरी है।

19. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **रतन लाल बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1965 एससी 444** में, अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के उद्देश्य एवं प्रयोजन पर चर्चा करते हुए, प्रस्तर संख्या 4 में यह कहा :-

“4. यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में सुधार के आधुनिक उदारवादी प्रवृत्ति की तरक्की में एक मील का पत्थर है। यह इस सिद्धांत की पहचान का नतीजा है

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कि फौजदारी विधि का उद्देश्य, किसी अपराधी को दण्ड देने से ज़्यादा उसे सुधारना है। मोटे तौर पर यह अधिनियम 21 वर्ष से कम उम्र के अपराधियों तथा उससे ज़्यादा उम्र के अपराधियों और उन अपराधियों में फर्क करता है, जिन्होंने मृत्यु या आजीवन कारावास के दण्ड वाला अपराध कारित किया है एवं जो कम गंभीर अपराध के दोषी हैं। जबकि 21 वर्ष से ज़्यादा उम्र के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह पूरी छूट है कि वह उनकी भर्त्सना करके या सदाचार की परीक्षा पर छोड़ दे, जो अधिनियम के उपयुक्त प्रावधान में दी गई शर्त के अधीन हो। 21 वर्ष से कम उम्र के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह आदेश दिया जाता है कि वह उन्हें कारावास की सज़ा न दे, जब तक कि मामले की परिस्थितियां को देखते हुए वह इस बात से संतुष्ट न हो जाएँ; जिसमें अपराधियों के अपराध की प्रकृति तथा उनका चरित्र शामिल है। अधिनियम की धारा 3 और 4 के तहत उनसे निपटना वांछनीय नहीं है।”

20. इसके अलावा, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **वेद प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य (1981)**

1 एससीसी 447 : एआईआर 1981 एससी 643 के मामले में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4 के पालन के संबंध में पीठ तथा बार (अधिवक्ता संघ) के कर्तव्यों पर चर्चा करते हुए, निम्नानुसार प्रसन्नता जताई :-

"जिस अपराध के लिए दण्डित किया गया है, वह ऐसा है जिस पर धारा 360 या कम से कम अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1958 लागू होगा। हमारे समक्ष जो सामग्री है, वह अधूरी है क्योंकि विचारण न्यायालय ने दण्ड देने का कार्य लापरवाही

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

से किया है। हमें इस बात पर ज़ोर देना चाहिए कि किसी अभियुक्त को दण्ड देना समझदारी का कार्य है, न कि कोई नियमित या यांत्रिक नुस्खा। विचारण न्यायालय को इस परिस्थिति में न्यायोचित दण्ड देने के लिए सहायता हेतु आवश्यक सामग्री इकट्ठा करनी चाहिए थी। अपराध करने वाले की सामाजिक पृष्ठभूमि तथा व्यक्तिगत हालात बहुत ज़रूरी हैं, हालांकि असल में फौजदारी न्यायालय ने अपराधी के सामाजिक पृष्ठभूमि तथा व्यक्तिगत हालात पर शायद ही ध्यान दिया हो। भले ही दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 लागू न हो, यह दण्ड देने वाले न्यायालय का कर्तव्य है कि वह पुनर्वास के नज़रिए से दण्ड पर असर डालने वाले तथ्यों को इकट्ठा करने के लिए क्रियाशील हो। इस मामले में ऐसे सामग्री की कमी है। हमें अधिवक्ता से भी बहुत कम मदद मिली। असल में, बार के सदस्य भी इन विधिक नियमों पर ठीक से ध्यान नहीं देते हैं, जो किसी अपराधी से इस तरह निपटने से जुड़े हैं कि वह गैर-अपराधी बन जाए। हम इस बात पर इसलिए ज़ोर देते हैं क्योंकि दण्ड में सुधार से जुड़े विधि को 'लघु अधिनियम' माना गया है तथा इसलिए उनका कोई खास महत्व नहीं है। यह पूरी तरह से गलत तरीका है और अगर बार मदद नहीं भी करता है, तो पीठ (बेंच) को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम जैसे विधि में शामिल दण्ड देने के मानवीय उद्देश्य को पूरा करना चाहिए।”

21. यह भी ध्यान देने वाली बात है कि इस माननीय न्यायालय ने **सुभाष चंद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 2015 विधिक वाद (इलाहाबाद) 1343** के मामले में, परिवीक्षा की विधि को लागू करने तथा उपयुक्त मामलों में अभियुक्तों को लाभदायक विधि का लाभ देने की

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

ज़रूरत पर ज़ोर दिया है। इस न्यायालय ने सभी विचारण न्यायालयों तथा अपीलीय न्यायालयों को ये निर्देश दिए हैं :-

"ऐसा लगता है कि ऊपर बताए गए लाभदायक विधि को नज़रअंदाज़ कर दिया गया है तथा न्यायाधीश भी विधि के इस नियम को लगभग भूल गए हैं। इसलिए, वाद से विदा होने से पूर्व, इस न्यायालय को लगता है कि अगर विचारण न्यायालयों एवं अपीलीय न्यायालयों के लिए चेतावनी नहीं लिखी गई, तो मैं अपना कर्तव्य निभाने में विफल हो जाऊंगा। इस न्यायालय के महानिबंधक (रजिस्ट्रार जनरल) को निर्देश दिया जाता है कि वे इस निर्णय की प्रति उत्तर प्रदेश के सभी जिला न्यायाधीशों को भेजें, जो बदले में इस आदेश की प्रति अपने अधीनस्थ सभी न्यायिक अधिकारियों के बीच पहुँचाना सुनिश्चित करेंगे तथा इस निर्णय का सख्ती से पालन सुनिश्चित करेंगे। राज्य के जिला न्यायाधीशों को भी निर्देश दिया जाता है कि वे हर महीने सभी न्यायालय, यानी विचारण न्यायालय और अपीलीय न्यायालय से आख्या (रिपोर्ट) मांगें जो ऐसे मामलों को देखते हैं एवं बताएं कि कितने मामलों में अभियुक्त को ऊपर बताए गए नियमों का लाभ दिया गया है। जिला न्यायाधीशों को यह भी निर्देश दिया जाता है कि वे हर महीने होने वाली बैठक में ऐसे मामलों की व्यक्तिगत रूप से निगरानी करें। संबंधित जिला न्यायाधीश, महानिबंधक को हर महीने यह विवरण भेजेगा कि विचारण न्यायालय/अपीलीय न्यायालय ने कितने मामलों में अभियुक्त को ऊपर बताए गए लाभदायक विधि का फायदा दिया है। इस आदेश की एक प्रति तुरंत पालन सुनिश्चित करने के लिए महानिबंधक के समक्ष रखी जाए।"

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

22. इसके अलावा, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने महाराष्ट्र राज्य बनाम जगमोहन सिंह कुलदीप सिंह आनंद (2004) 7 एससीसी 659 में अपीलकर्ताओं को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 का लाभ दिया है तथा निम्नानुसार टिप्पणी की है :-

"अभियुक्त की तरफ से उपस्थित हुए विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि दुर्घटना वर्ष 1990 की है। सभी लोग पढ़े-लिखे और पढ़ोसी हैं। इसलिए विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना की कि अभियुक्त को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 का लाभ दिया जाए। अभियुक्त की तरफ से की गई प्रार्थना यथोचित लगती है। दुर्घटना दस वर्ष से ज़्यादा पुरानी है। विवाद पड़ोसियों के बीच जल निकासी के एक छोटे से मुद्दे पर हुआ था। दुर्घटना गुस्से में हुई थी। सभी लोग पढ़े-लिखे थे तथा दूर के रिश्तेदार भी थे। दुर्घटना ऐसा नहीं है कि अभियुक्त को कारावास का दण्ड दिया जाये। हमारी राय में, यह एक उपयुक्त मामला है, जिसमें अभियुक्त को अच्छे बर्ताव के लिए एक वर्ष का बंधपत्र भरने का निर्देश देकर, परिवीक्षा पर छोड़ दिया जाना चाहिए।"

23. सीताराम पासवान एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एआईआर 2005 एससी 3534 मामले में अभियुक्त/अपीलकर्ता को परिवीक्षा अधिनियम का लाभ देना वांछनीय बताया गया है, इसमें सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है :-

"अपनी विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए, न्यायालय को मामले की परिस्थिति पर विचार करना होगा, अपराध की प्रकृति तथा अपराधी के चरित्र पर विचार करना होगा। अपराध की प्रकृति पर विचार करते समय, न्यायालय को अपराध की गंभीरता, व्यथित पर अपराध के असर को वास्तविक रूप से देखना

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

होगा। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अभियुक्त को मिलने वाला लाभ प्रावधान में दिए गए सीमा के अधीन है तथा "कदाचित" शब्द साफ तौर पर बताता है कि अपराध की प्रकृति तथा अपराधी के चरित्र और मामले की सम्पूर्ण परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए, अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 3 या 4 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग करके अपराधी को छोड़ने का अधिकार न्यायालय के पास है। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत शक्ति, न्यायालय के पास तब आती है जब कोई व्यक्ति किए गए अपराध का दोषी पाया जाता है, जो कि मृत्यु या आजीवन कारावास का दण्ड न हो। इस शक्ति का प्रयोग न्यायालय तब कर सकते हैं, जब कोई व्यक्ति दोषी पाया जाता है और अगर न्यायालय को लगता है कि मामले की परिस्थिति, जिसमें अपराध की प्रकृति तथा अपराधी का चरित्र शामिल है, को देखते हुए आरोपी को लाभ दिया जाना चाहिए, तो न्यायालय इस शक्ति का प्रयोग अपीलीय या पुनरीक्षण चरण पर भी कर सकता है और यह न्यायालय, भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपील सुनते समय भी कर सकता है।"

24. यह भी ध्यान देने वाली बात है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मोहम्मद हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य के मामले में एआईआर 2017 एससी पृष्ठ 660** पर निम्नलिखित टिप्पणी की है :

"20-.....रतन लाल बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1965 एससी 444 में, माननीय न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने बहुमत की ओर से बोलते हुए, इस प्रकार राय व्यक्त की :-

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

“यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में सुधार के आधुनिक उदारवादी प्रवृत्ति की तरक्की में एक मील का पत्थर है। यह इस सिद्धांत की पहचान का नतीजा है कि फौजदारी विधि का उद्देश्य, किसी अपराधी को दण्ड देने से ज़्यादा उसे सुधारना है। मोटे तौर पर यह अधिनियम 21 वर्ष से कम उम्र के अपराधियों तथा उससे ज़्यादा उम्र के अपराधियों और उन अपराधियों में फर्क करता है, जिन्होंने मृत्यु या आजीवन कारावास के दण्ड वाला अपराध कारित किया है एवं जो कम गंभीर अपराध के दोषी हैं। जबकि 21 वर्ष से ज़्यादा उम्र के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह पूरी छूट है कि वह उनकी भर्त्सना करके या सदाचार की परिवीक्षा पर छोड़ दे, जो अधिनियम के उपयुक्त प्रावधान में दी गई शर्त के अधीन हो। 21 वर्ष से कम उम्र के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह आदेश दिया जाता है कि वह उन्हें कारावास की सज़ा न दे, जब तक कि मामले की परिस्थितियां को देखते हुए वह इस बात से संतुष्ट न हो जाएँ; जिसमें अपराधियों के अपराध की प्रकृति तथा उनका चरित्र शामिल है। अधिनियम की धारा 3 और 4 के तहत उनसे निपटना वांछनीय नहीं है।”

25. यह कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जगत पाल सिंह एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एआईआर 2000 एससी 3622 के मामले में, अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 452, 506 के अंतर्गत दोषी ठहराए जाने के निर्णय को बरकरार रखते हुए, परिवीक्षा का लाभ दिया है तथा अभियुक्तों को छह महीने की अवधि के लिए सदाचार और शांति बनाए रखने के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष बंधपत्र भरने पर छोड़ दिया गया है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

26. यह ध्यान देने वाली बात है कि यह घटना वर्ष 1992 में हुई थी। अभियुक्त-अपीलकर्ता जरनैल सिंह, इस मामले में पिछले 34 सालों से (घटना के बाद से) परेशान है तथा अपीलकर्ता के विरुद्ध कोई आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं है।
27. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए, मेरा मानना है कि अभियुक्त/अपीलकर्ता को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों का लाभ दिया जाना चाहिए।
28. ऊपर दी गई बात को ध्यान में रखते हुए, अपीलकर्ता जरनैल सिंह की सज़ा बरकरार रखी जाती है, लेकिन अपीलकर्ता की उम्र, जो लगभग 67 वर्ष की है, को देखते हुए सज़ा में बदलाव किया जाता है। अपीलकर्ता को कारागार भेजने के बजाय, उसे अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के की धारा 4 का लाभ दिया जाता है। उसे संबंधित जिला परिवीक्षा अधिकारी के समक्ष अपने स्वीय बंधपत्र के साथ दो प्रतिभुओं को दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है, दो वर्ष तक शांति और सदाचार बनाए रखने के वचन के साथ। ये बंधपत्र अपीलकर्ता जरनैल सिंह को निर्णय के दिनांक से दो महीने के भीतर दाखिल करने होंगे।
29. यह भी निर्देश दिया जाता है कि अपीलकर्ता, आज से दो महीने के भीतर विचारण न्यायालय में कुल 5,000 रुपये जमा करे। विचारण न्यायालय घायल परमानंद के पक्ष में मुआवजे के तौर पर यह रकम जारी कर देगा। अगर वह अब वह जीवित नहीं है, तो यह रकम उसके विधिक उत्तराधिकारियों के पक्ष में जारी कर दी जाए।
30. ऊपर बताई गई किसी भी शर्त को तोड़ने पर, अपीलकर्ता जरनैल सिंह को हिरासत में लिया जाएगा और उसे विचारण न्यायालय द्वारा दी गई मूल सज़ा काटनी होगी।
31. ऊपर दिए गए बदलाव के साथ, तत्काल आपराधिक अपील को **आंशिक स्वीकृति** दी जाती है।
32. आदेश की प्रमाणित प्रति भी, संबंधित न्यायालय को पालन के लिए भेजी जाये।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

33. कार्यालय को निर्देश दिया जाता है कि इस आदेश को, अनिवार्य रूप से पालन हेतु, संबंधित न्यायालय को बताए।
34. अगर कोई निचली न्यायालय का अभिलेख (रिकॉर्ड) हो, तो उसे भी संबंधित जिला न्यायालय को वापस भेज दिया जाए।

17 मार्च, 2026

(न्यायमूर्ति प्रमोद कुमार श्रीवास्तव)

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।